पोलियो उन्मूलन का संदिग्ध दावा

डॉ. अनंत फड़के

स्वास्थ्य अधिकारी खुद को बधाइयां देने में व्यस्त हैं क्योंकि वर्ष 2011 में पोलियो अपंगता का एक भी मामला सामने नहीं आया है। मगर इसका मतलब यह नहीं है कि पोलियो का सफाया हो गया है। कई अन्य देशों के समान पोलियो के मामले फिर उभर सकते हैं।

दूसरी बात यह है कि कई जन स्वास्थ्य विशेषज्ञों ने बताया है कि पोलियो का उन्मूलन टीके की मदद से नहीं किया जा सकता। अन्य कई संक्रामक रोगों के समान, पोलियोमेलाइटिस का मूल कारण गरीबी है, जिसकी वजह से अस्वच्छ परिस्थितियां और कुपोषण पैदा होता है। विकसित देशों में पोलियो के मामलों में कमी मूलतः जीवन स्तर में सुधार के साथ आई थी। इसमें स्वच्छता में सुधार भी शामिल था। पोलियो के मामलों के समाप्त होने में टीकों की भूमिका महज़ मददगार की थी।

अलबत्ता, आजकल एक भ्रम उत्पन्न कर दिया गया है कि हम मात्र टीकों के दम पर पोलियो का सफाया कर सकते हैं। यह सही है कि टीकाकरण की मदद से पोलियो के प्रकोप में काफी कमी लाई जा सकती है। किंतु कई तकनीकी कारणों से, चेचक के विपरीत, पोलियो का सफाया मात्र टीकों की मदद से नहीं किया जा सकता।

भारतीय पोलियो उन्मूलन कार्यक्रम के तहत, पोलियो के पिलाए जाने वाले टीके की तीन खुराक 1978-79 में राष्ट्रीय टीकाकरण कार्यक्रम में लागू की गई थी। इसके चलते लकवाशुदा पोलियो के मामलों में 80 प्रतिशत की कमी आई थी - जहां 1988 में 24,257 मामले हुए थे, वहीं 1994 में इनकी संख्या घटकर 4,793 रह गई थी। मगर 1995 में, अंतर्राष्ट्रीय संस्थाओं के दबाव में, पोलियो उन्मूलन की रणनीति अपनाई गई। इसमें टीकाकरण के खर्च में कई गुना वृद्धि हुई और बड़ी संख्या में कर्मचारियों की ज़रूरत पड़ी। केंद्र सरकार ने वर्ष 2009-10 में पल्स पोलियो पर 1747 करोड़ रुपए खर्च किए थे, जबकि पिछले 12 वर्षों में कुल 12,000 करोड़ रुपए खर्च किए जा चुके हैं। वर्ष 2006-07 में सरकार ने पल्स पोलियो पर 1004 करोड़ रुपए खर्च किए थे वहीं शेष समस्त टीकों को कुल मिलाकर 327 करोड़ मिले थे। तुलना के लिए यह भी देखें कि इसी वर्ष टीबी नियंत्रण पर मात्र 184 करोड़ रुपए खर्च किए गए थे। यहां गौरतलब तथ्य यह है कि देश में टीबी मरीज़ों की संख्या 1.5 करोड़ है और इसकी वजह से हर साल 4 लाख मौतें होती हैं। इसकी तुलना में पोलियो के मामलों की संख्या अनुमानित 20,000 है और जब कार्यक्रम शुरू किया था, उस समय इसकी वजह से सालाना अधिक से अधिक 500 मौतें होती थीं।

पोलियो उन्मूलन के इस विशाल कार्यक्रम को इस आधार पर उचित ठहराया जाता है कि इससे बच्चों में अपंगता के मामलों में कमी आएगी क्योंकि बच्चों में अपंगता का सबसे प्रमुख रोकथाम योग्य कारण पोलियो ही है। मगर हकीकत यह है कि पोलियो उन्मूलन कार्यक्रम शुरू होने के बाद टांगों में लकवे के प्रकोप में वृद्धि हुई है!

राष्ट्रीय पोलियो निगरानी परियोजना की वेबसाइट पर उजागर होता है कि बच्चों में एक्यूट फ्लेक्सिड पेरेलिसिस (एएफपी यानी अपंगता) के जो प्रकरण 1997 में मात्र 3047 थे, वे 2011 में बढ़कर 60,466 हो गए थे यानी इस अवधि में 20 गुना की वृद्धि हुई। अधिकारियों का कहना है कि यह वृद्धि एएफपी प्रकरणों के बेहतर दस्तावेज़ीकरण और निगरानी व्यवस्था की संवेदनशीलता में वृद्धि का नतीजा है। वे कहते हैं कि इनमें से अधिकांश बच्चे बाद में सामान्य पाए गए। अलबत्ता, मान लीजिए यदि निगरानी व्यवस्था वर्ष 2000 में ज़्यादा संवेदनशील हो गई, तो होना यह चाहिए था कि वर्ष 2011 में तेज़ वृद्धि नज़र आती। मगर एएफपी प्रकरणों में 1998 के बाद से आज तक हो रही सतत वृद्धि इस व्याख्या को झुठला देती है।

जानकारी का अधिकार कानून के तहत डॉ. जेकब पुलियल ने उत्तर प्रदेश के जो आंकड़े हासिल किए, उनसे पता चला कि वर्ष 2005 में एएफपी रोगियों के जो 10,055 मामले सामने आए थे, उनमें से 2553 का फालोअप अगले दो माह तक किया गया था। इनमें से 898 (39 प्रतिशत) में लकवा स्थायी बना रहा था। अर्थात ये भ्रामक 'पॉज़िटिव केसेस' नहीं थे बल्कि वास्तविक लकवा के मामले थे। डॉ. सत्यमाला ने, एक बार फिर सूचना का अधिकार की मदद से, 2006 के लिए भी इस बात की पुष्टि की थी। यह सही है कि लकवे के ऐसे अधिकांश मरीज़ों के मल में पोलियो वायरस नहीं पाया गया था, मगर लकवाग्रस्त बच्चों और उनके माता-पिता के लिए यह कोई बड़ी सांत्वना की बात नहीं है।

यह संभव है कि ओरल पोलियो टीके (जिसमें दुर्बलीकृत मगर जीवित पोलियो वायरस होता है) के व्यापक उपयोग के चलते इस वायरस में उत्परिवर्तन हो गया हो जिसके शारीरिक गुणधर्म शायद कुदरती पोलियो वायरस के समान न हों मगर वह लकवा पैदा कर सकता हो। लकवाग्रस्त बच्चों की संख्या में वृद्धि की मानवीय और संवेदनशील प्रतिक्रिया यह होती कि ओरल पोलियो टीके की अतिरिक्त खुराकें रोक दी जातीं और मामले की जांच की जाती। यदि इसकी कोई अन्य वैज्ञानिक व्याख्या है, तो इस कार्यक्रम को दोषमुक्त किया जा सकता है। मगर ऐसा होने तक ओरल पोलियो टीके की खुराकें पिलाते जाना अनैतिक है।

ज़रूरत इस बात की है कि जिन बच्चों ने अपनी टांगें गंवा दी हैं, उनका पूरा पुनर्वास किया जाए और उनके माता-पिता को समुचित मुआवज़ा दिया जाए। उन अधिकारियों की आपराधिक जवाबदेही भी सुनिश्चित की जानी चाहिए, जिन्होंने एएफपी मरीज़ों के फालो-अप के विभेदित आंकड़ों को दबाया और जो पोलियो उन्मूलन की इस नीति को जारी रखने के लिए ज़िम्मेदार हैं।

टीके से लकवा

यह जानी-मानी बात है कि ओरल पोलियो टीका अनिवार्य रूप से टीका जनित लकवाशुदा पोलियो पैदा करता है। इसे वैक्सीन एसोसिएटेड पेरेलिटिक पोलियो (वीएपीपी) कहते हैं। ऐसे मामले टीका लेने वाले थोड़े से बच्चों में सामने आते हैं - 40 लाख पोलियो खुराक में औसतन 1 मामला देखा जाता है। भारत में पल्स पोलियो के जारी रहने तक प्रति वर्ष करीब 200 वीएपीपी मामले होने की संभावना है। इन बच्चों को 'जनहित' की बलिवेदी पर मजबूरन अपनी टांगें कुरबान करनी होंगी। और तो और, इनका पुनर्वास भी नहीं होगा और न ही इनके माता-पिता को कोई क्षतिपूर्ति मिलेगी। जन स्वास्थ्य अभियान ने वीएपीपी मरीज़ों के पुनर्वास और क्षतिपूर्ति की मांग उठाई थी। राष्ट्रीय मानव अधिकार आयोग ने इसकी सिफारिश भी की थी मगर सरकार ने इसे अनसुना कर दिया।

जब तक पोलियो का विश्व स्तर पर उन्मूलन नहीं होता तब तक विकसित देशों को पोलियो टीकाकरण जारी रखना पड़ेगा, चाहे वहां पोलियो का एक भी मामला सामने न आए। लिहाज़ा यह विकसित देशों के हित में है कि पोलियो उन्मूलन कार्यक्रम जारी रहे, चाहे यह विकासशील देशों की प्राथमिकता न हो। इस कार्यक्रम को जारी रखवाने का एक तरीका यह है कि पोलियो की समस्या को बढ़ा-चढ़ाकर पेश किया जाए।

1988 में दुनिया भर से लकवाशुदा पोलियो के 32,419 मामले सामने आए थे। लकवाशुदा पोलियो के मामलों का

अनुमान लगाते वक्त विश्व स्वास्थ्य संगठन ने इस आंकड़े को 10 गुना बढ़ाकर 3,50,000 कर दिया था। ऐसा करने के लिए दलील यह दी गई थी कि लकवाशुदा पोलियो के वास्तविक मामले रिपोर्टेड मामलों से 10 गुना ज़्यादा हैं। फिर एक चमत्कार किया गया कि 'रिपोर्टेड' शब्द को विलोपित कर दिया और यह दावा किया गया कि सालाना '3,50,000 से ज़्यादा बच्चे' पोलियो की वजह से लकवाग्रस्त होते हैं।

गौरतलब है कि बच्चों में अपंगता के कई कारण होते हैं और पोलियो उन कई कारणों में से एक है। हकीकत यह है कि एएफपी के अधिकांश मामले गैर-पोलियो वायरसों की वजह से होते हैं। लिहाज़ा, यदि पोलियो का उन्मूलन हो गया, तो भी बच्चों में अपंगता के मामलों में महज़ 20 प्रतिशत की कमी आएगी। इस बात में कोई दो राय नहीं है कि हमें टीकाकरण और स्वच्छता के ज़रिए पोलियो पर नियंत्रण की कोशिश करनी चाहिए। मगर यह एहसास गुमराह करने वाला है कि इस कार्यक्रम के ज़रिए हम बच्चों में अपंगता का सफाया करने जा रहे हैं। ***(स्रोत फीचर्स)***